P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अनुदान –लेखन विधा में इतिहास लेखीय तत्व

प्रताप विजय कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर,
प्राचीन इतिहास विभाग,
ही0रा0स्ना0महाविद्यालय,
खलीलाबाद, संत कबीर नगर,
भारत

सारांश

प्राचीन भारतीय इतिहास –लेखन को जिन अनेक प्रवृत्तियों एवं प्रविधियों ने प्रभावित किया, उनमें एक विधा भूमि अनुदान भी है। यद्यपि इस अनुदान लेखन की परम्परा को इतिहासकारों द्वारा सदैव ही गौंण स्थान प्रदान किया गया। इस प्रथा ने पूर्व मध्यकालीन समाज को अत्यधिक प्रभावित किया, परन्तु इस परम्परा की जड़े प्राचीन भारतीय समाज विशेषकर मौर्य काल से ही स्थापित होने प्रारम्भ कर दी थी। इसका संकेत काटिल्य अर्थशास्त्र, याज्ञवल्क्य स्मृति आदि से मिलता है। अनुदान लेख भूमि दान से सम्बन्धित सनद है जो ताम्र पत्रों पर लिखित साक्ष्य के रूप में प्राप्त होता है। कुछ राजनीतिक एवं प्रशासनिक प्रवृत्तियों के कारण मौर्योत्तर काल और विशेषकर गुप्तकाल में राज व्यवस्था सामंतवादो ढॉचे में ढलने लगी। इसमें सबसे महत्वपूर्ण प्रवृत्ति ब्राह्मणों को भूमि दान करने की थी। धर्मशास्त्रों, महाकाव्यों के उपदेशात्मक अंशों और पुराणों में दिये गये धर्मादेशों ने इस प्रवृत्ति को पुण्य कार्य के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। महाभारत के अनुशासन पर्व में भूमिदान की महिमा का गुणगान एक सम्पूर्ण अध्याय 'भूमिदान प्रशंसा' में किया गया है। पालि साहित्यों में भी कोशल तथा मगध के राजाओं द्वारा दान किये गये गॉवों को उल्लेख मिलता है।[1]

मुख्य शब्द : ताम्रशासन, भमिदान पत्र, स्वर्ग, प्रतिसर्ग, मनुवन्तर।

प्रस्तावना

मौर्यकाल में अनुदान पत्रों की परम्परा दिखाई नहीं देती, परन्तु इस काल के ग्रन्थों में ब्रह्मदेय शब्द का उल्लेख किया गया है। पुरोहितों को भूमिदान देने की प्रथा का प्रारम्भ प्राक्–मौर्य और मौर्यकाल में ही देखा जा सकता है। कौटिल्य के अनुसार नई बस्तियों में ब्रह्मदेय भू–स्वामित्व के अनुसार भूमिदान करनी चाहिए और ब्रह्मदेय भू–स्वामित्व के शर्तो में कर और दण्ड से मुक्ति भी शामिल होती थी।[2] अर्थशास्त्र में यह भी स्पष्ट किया गया है कि कर मुक्त भूमि प्राप्त कर्ता यदि अन्यत्र भी रहते हों तो भी दान में प्राप्त भूमि पर उनका स्वामित्व सुरक्षित रहता था।[3] भूमिदान के कुछ पुरालेखीय प्रमाण भी प्राप्त हैं, इसमें प्रथम आभिलेखिक साक्ष्य ई0पू0 के प्रथम शताब्दी के एक सातवाहन अभिलेख में मिलता है, जिसमें अश्वमेघ यज्ञ के अवसर पर भूमिदान का उल्लेख है।[4] इस अभिलेख म केवल भूमिदान की चर्चा है दान ग्रहीता को अन्य प्रशासकीय अधिकार नहीं दिये गये हैं। जब कि इस प्रकार का दूसरा प्रमाण दूसरी शताब्दी ई0 का है, जिसमें बौद्ध भिक्षुओं को दान किये गये गॉवो का उल्लेख है। यह दान सातवा हन शासक गौतमी पुत्र शातकर्णी ने दिया था, इसमें दान में दान ग्रहीता को प्रशासकीय अधिकार भी हस्तांतरित किये गये थे, क्योंकि इस दान क्षेत्र में राजकीय अधिकारियों का हस्तक्षेप निषेध किया गया है।[5]

प्रथम बार गुप्त– वाकाटक युग में भूमिदान की परम्परा का व्यापक प्रचलन प्रारम्भ हुआ। गुप्तों, वाकाटकों, उनके सामंतो एवं समकालीन उत्तर तथा दक्षिण के अन्य शासको के दर्जनों अभिलेखों में भूमिदानों के विवरण मिलते है। इसके सन्दर्भ में साहित्यिक साक्ष्य भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। वृहस्पति स्मृति के अनुसार राजा ब्राह्मणों को जब कर मुक्त भूमि दान में दें और भूमि सम्बन्धी लिखित ब्योरा ताम्र–पत्र या कपड़े पर लिखवा कर दानग्रहीता को प्रदान करें, साथ ही दान देने वाले राजा, उसके माता–पिता के नाम, दान प्राप्तकर्ता ब्राह्मण और उसके माता–पिता का नाम उसकी शैक्षिक योग्यता, दान में प्रदत्त भूमि का मूल्य, दान की तिथि, और तदुपरान्त निर्देश कि यह दान सूर्य, चन्द्र के अस्तित्व पर्यन्त के लिए होगा[6] अंकित होना चाहिए, और साथ ही दानदाता के 60 हजार वर्ष तक स्वर्ग में एवं उसमें विघ्न उत्पन्न करने वाले को उतने ही वर्ष तक नर्कगामी होने का उल्लेख किये जाने का वर्णन किया गया है।[7] इस विवरण के उपरान्त राजा के मुहर सहित उसका हस्ताक्षर और सांधिविग्रहिक के भी हस्ताक्षर किये जाने का उल्लेख है।[8]

भूमिदान– पत्र या दान शासन को राजशासन से सम्पृक्त किया गया है। राजशासन से सम्बन्धित सन्दर्भ नारद स्मृति[9] बृहस्पति स्मृति[10] कात्यायन स्मृति[11] तथा अग्नि पुराण[12] जैसी रचनाओं में अनेकसः प्रयोग हुए हैं। राजशासन के लिए शासन, राजलेख्यम् राजकीय लेख्यम्, राजकृत शासन आदि विविध शब्दों का प्रयोग हुआ है। वशिष्ठ से लेकर विभिन्न स्मृतिकारों ने इसका वर्णन तथा निरूपण भूमिदान पत्र के अथ में किया है। याज्ञवल्क्य स्मृति में भावी राजाओं के सूचनार्थ शासन को भूमिदान से सम्बन्धित किया गया है।[13] याज्ञवल्य स्मृति के अनुसार शासन को कपड़े अथवा ताम्र पर लिपिबद्ध करके उस पर राजमुद्रा अंकित करने की सलाह दी गयी है, तथा यह भी कहा गया है कि उसमें दान का क्षेत्रफल तथा राजा के वंश वृक्ष के उल्लेख के साथ ही राजा को स्वाक्षरों में उसे अन्तिम रूप देना चाहिए।[14] इस आदर्श अवधारणा के विषय में दो तथ्य ध्यातव्य है एक तो यह कि राजा को सनद लिपिबद्ध कराने (कारपेत)[15] की सलाह दी गयी है, तथापि उसके लेखक के रूप में सांधिविग्रहिक को स्थान नहीं दिया गया है। जबकि बहुत से दान–पत्रों में इसे लिपिकार बताया गया है। दूसरे–हालॉकि परवर्ती विधि"ाास्त्री इन व्यवस्थाओं पर टिप्पणी करते है कि भूमि या उसका राजस्व ब्राह्मणों को देना है, लेकिन याज्ञवल्क्य ने दान भोगियों के इस वर्ग का उल्लेख नही किया है।

याज्ञवल्क्य स्मृति के श्लोकों का भाष्य करते हुए वि"वरूप (800–850 ई0)[16], जिसकी रचना उपलब्ध भाष्य साहित्य में सबसे प्राचोन मानी जाती है, से यह भी स्पष्ट होता है कि शासन पर दूतक के पद पर हस्ताक्षर देने वाले राजा के स्कन्धावार का नाम तथा उसकी तीन पीढ़िया की व"ाावली, जिसमें स्त्रियों के नाम भी शामिल किये गये हो, अंकित होने चाहिए, और साथ ही उसमें दान देने के सुपरिणामों एवं उसे वापस लेने के कुपरिणामों के संकेत भी लिपिबद्ध होने चाहिए। जहॉ तक स्मृति ग्रन्थों का प्र"न है, ब्यास स्मृति में जिसे 600 से 900 ई0 की रचना स्वीकार की जाती है, राज"ाासन का सर्वप्रथम विवेचन किया गया है। इस स्मृति में दी गयी परिभाषा के अनुसार–राज"ाासन, भूमिदान से सम्बन्धित राज्यादे"ा की सूचना देने वाला प्रलेख है।[18] यह गवाहों की उपस्थिति में लिखे जाने वाले अन्य प्रकार के प्रलेखों वि"ोषकर जनपद लेख्यम् से, जिसे लौकिक लेख्यम् या रेहन, ब्याज ऋण, धरोहर, आदि से सम्बन्धित प्रलेख भी कहा गया है,[19] से सर्वथा भिन्न है। ब्यास स्मृति में भी राज शासन स्वयं राजा के निर्दे"ा पर सांधिविग्रहिक द्वारा ताम्रपट्ट या वस्त्र पर लिखे जाने का उल्लेख करता है।[20] इन तमाम अनुदान पत्र लेखों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय इतिहास–लेखन की परम्परा को अनुदान पत्रों ने अत्यधिक प्रभावित किया, जो भारत की एक मौलिक विधा थी। परन्तु जहॉ यह विधा भारत के इतिहास–लेखन की मौलिकता प्रदान करने में सक्षम थी, वहों यह उपेक्षित भी रही है। इसके विपरीत भारतीय इतिहास–लेखन पा"चात्य दृष्टिकोण में मार्क्स, हीगेल आदि के विचारों से प्रभावित रही। अनुदान पत्रों को इतिहास–लेखन की विधा स्वीकार करना अनुचित नहीं होगा, क्योंकि इतिहास–पुराण परम्परा में पुराणों के पांच लक्षण स्वीकार किया गया है–पुराणों पंचलक्षणं। इसके अन्तर्गत सर्ग, प्रतिसर्ग, मन्वन्तर, व"ा एवं व"ाानुचरित का स्थान है।

अध्ययन का उद्देश्य

इतिहास लेखन में अनेक विधाओं का उपयोग किया गया है। फिर भी बहुत ऐसे अनछुये पहलू हैं, जिनका इतिहास लेखन में उपयोग किया जाना बाकी है। जिसमें एक पक्ष भूमिदान पत्र हैं। जिनका समयक उपयोग इतिहास लेखन के लिए किया जा सकता है। जिसका इस शोध पत्र में प्रयास किया गया है।

निश्कर्श

पूर्व मध्य कालीन अनुदान–पत्रों में लम्बी व"ाावलियां देखने को मिलती है, जिसका उल्लेख उपर्युक्त सन्दर्भों में किया गया है। प्रो0वी0एस0 पाठक के अनुसार – भारतीय इतिहास लेखक की दृष्टि में राजाओं के परस्पर युद्ध, विजय एवं पराजय साम्राज्य विस्तार, राजपरिवारों के 'ाड्यंत्र ये केवल सतही घटनाएं है। जिसे प्राचीन भारतीय लेखकों ने महत्व नहीं दिया। अतः जो सार्वभौम सत्य है वह इन्ही सतही घटनाओं के नीचे छिपा रहता है, और उन्ही घटनाओं का उद्घाटन भारतीय इतिहास–लेखन का वास्तविक उद्दे"य था।

अंत टिप्पणी

1. *राम शरण शर्मा–भारतीय सामंतवाद*
2. *अर्थ"ाास्त्र–अध्याय–2, श्लोक–1*
3. *अकरदाः परत्र वसतो भोगमुप जीवएयु।*
   अर्थ"ाास्त्र 31 10
4. *सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन–पेज–188*
5. *सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन–पेज–192*
6. *सक्रेट बुक आप द ईस्ट–वायल्यूम–33 22*
7. *गुणैधर ताम्र–पत्र*
8. *सेक्रेट बुक आफ द ईस्ट कयल्यूम 33 पेज 305, 306*
9. *धर्मकों"ा भाग–1 व्यवहार खण्ड*
10. *वही–पेज 98–99*
    (राजाज्ञा शब्द का प्रयोग)
11. *कात्यायन स्मृति, पेज 103*
    (राज"ाासन)
12. *अग्नि पुराण–आनन्दाश्रम संस्करण*
13. *धर्मकों"ा–भाग–एक–पेज–39*
14. *वही पेज–349–50*
15. *वही*
16. *काणे, पी.वी.–धर्म"ाास्त्र का इतिहास–भाग–तीन*
17. *धर्मकों"ा–भाग एक पेज–350*
18. *वही*
19. *वही*
20. *वही–पेज–375*
    यथा–राजाज्ञा तु समादिष्टः सान्धिविग्रहिक लेखकः ताम्रपट्टे वापि विलिखेद राज शासनम्।